क्रांतिधर्मी साहित्य - युग साहित्य - इक्कीसवीं सदी का मार्गदर्शक साहित्य

क्रान्तिधर्मी साहित्य-युग साहित्य नाम से विख्यात यह पुस्तकमाला युगद्रष्टा-युगसृजेता प्रज्ञापुरुष पं.श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा १९८९-९० में महाप्रयाण के एक वर्ष पूर्व की अवधि में एक ही प्रवाह में लिखी गयी है। प्रायः २० छोटी-छोटी पुस्तिकाओं में प्रस्तुत इस साहित्य के विषय में स्वयं हमारे आराध्य प.पू. गुरुदेव पं.श्रीराम शर्मा आचार्य जी का कहना था-"हमारे ये विचार, क्रान्ति के बीज हैं। ये थोड़े भी दुनियाँ में फैल गए, तो अगले दिनों धमाका कर देंगे। सारे विश्व का नक्शा बदल देंगे।....मेरे अभी तक के सारे साहित्य का सार हैं।.... सारे जीवन का लेखा-जोखा हैं।.... जीवन और चिंतन को बदलने के सूत्र हैं इनमें।.... हमारे उत्तराधिकारियों के लिए वसीयत हैं।.... अभी तक का साहित्य पढ़ पाओ या न पढ़ पाओ, इसे जरूर पढ़ना। इन्हें समझे बिना भगवान के इस मिशन को न तो तुम समझ सकते हो, न ही किसी को समझा सकते हो।.... प्रत्येक कार्यकर्त्ता को नियमित रूप से इसे पढ़ना और जीवन में उतारना युग-निर्माण के लिए जरूरी है। तभी अगले चरण में वे प्रवेश कर सकेंगे।.... यह इस युग की गीता है। एक बार पढ़ने से न समझ आए तो सौ बार पढ़ना और सौ लोगों को पढ़ाना। उनसे भी कहना कि आगे वे १०० लोगों को पढ़ाएँ। हम लिखें तो असर न हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। जैसे अर्जुन का मोह गीता से भंग हुआ था, वैसे ही तुम्हारा मोह इस युग-गीता से भंग होगा।.... मेरे जीवन भर का साहित्य इस शरीर के वजन से भी ज्यादा भारी है। यदि मेरे जीवन भर के साहित्य को तराजू के एक पलड़े पर रखें और क्रांतिधर्मी साहित्य को दूसरे पलड़े पर, तो इनका वजन ज्यादा होगा।.... महाकाल ने स्वयं मेरी उँगलियाँ पकड़कर ये साहित्य लिखवाया है।.... इन्हें लागत मूल्य पर छपवाकर प्रचारित-प्रसारित (शब्दशः-अक्षरशः) करने की सभी को छूट है, कोई कापीराइट नहीं है।....मेरे ज्ञान शरीर को मेरे क्रान्तिधर्मी साहित्य के रूप में जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास करें।".....

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

संजीवनी विद्या का विस्तार

लेखक

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना प्रेस

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

फेक्स : (०५६५) २५३०२००

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

२००७

मूल्य : ४-०० रुपए मात्र

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना,
मथुरा (उ० प्र०)

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

मुद्रक :
युग निर्माण प्रेस,
गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उ० प्र०)

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

युग साहित्य का सृजन, जिसे किए बिना कोई गति नहीं

आवश्यक-अनावश्यक जानकारियाँ सिर पर लादने और नौकरी स्तर की कुछ आजिविका कमा लेने के लक्ष्य तक सीमित वर्तमान स्कूली शिक्षा अपने ढर्रे पर चलती भी रह सकती हैं। जिन्हें उसमें रुचि हो, वे उसे अपनाए भी रहें, पर उसी को सब कुछ मानकर उसी परिधि में सीमित रहने से काम चलेगा नहीं। अगले दिनों व्यक्ति और समाज को जिस ढाँचे में ढालना है, उसका प्रकाश-आभास भी उसमें कहीं ढूँढ़े नहीं मिलता। जिस सुधार और सृजन की आवश्यकता पड़ेगी, उसके लिए कोई संकेत तक उसमें नहीं है। आज तो सबसे अधिक आवश्यकता उसी की है, जिसको प्राचीन काल से विद्या या मेधा के नाम से जाना जाता है, जो स्वयं ही हर समस्या का निराकरण करने की स्थिति में होती है। अब आगमन-अवतरण उसी का होने जा रहा है।

जिन अभिनव जानकारियों और प्रेरणाओं की इन्हीं दिनों आवश्यकता है, उन्हें प्राप्त करने के लिए स्कूलों पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। उनमें एक तो उन विषयों का समावेश ही नहीं है, दूसरे वह पुस्तक-रटन से पूरी भी नहीं हो सकती। उसके लिए प्रत्यक्ष उदाहरणों का प्रेरणाप्रद माहौल सामने रहना चाहिए। विशेषतया अध्यापक इस स्तर के होने चाहिए, जो अपने साँचे में ढालकर छात्रों को प्रतिभावान-प्राणवान बना सकें, जो न केवल स्वयं बनें, वरन् अपने आलोक से समूचे संपर्क क्षेत्र को प्रकाशित कर सकें।

प्रज्ञा का अवतरण और विस्तार का कार्य असाधारण रूप से विस्तृत है। उसे शिक्षित-अशिक्षित, नर-नारी, बाल-वृद्ध, स्वस्थ-रोगी सभी को अवगत कराया जाना है। भाषाओं की छोटी-छोटी परिधि में बँटे हुए इस संसार में रहने वाले ६०० करोड़ मनुष्यों को एक प्रकार से युग चेतना-तंत्र के अंतर्गत प्रशिक्षित किया जाना है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

यह योजना इतनी बड़ी होगी कि उसे पूरी करने में कम से कम सौ वर्ष समय और अरबों-खरबों जितना धन जुटाना पड़ेगा। अध्यापक भर्ती और प्रशिक्षित करने पड़ेंगे, सो अलग। इसलिए युग शिक्षा का स्वरूप उन आधारों को अपनाते हुए विनिर्मित करना पड़ेगा, जो आज की परिस्थितियों में इन्हीं दिनों कर सकना संभव हो।

बड़े प्रयासों की प्रतीक्षा में रुके रहने की अपेक्षा, यही उपयुक्त समझा गया है कि वर्तमान परिस्थितियों में अपने छोटे साधनों से जो संभव हो, उसे तुरंत आरंभ किया जाए और लोगों को देखने दिया जाए कि आरंभ का प्रतिफल किस रूप में उपलब्ध हो रहा है। बात यदि वजनदार होगी, तो लोग अपनाएँगे भी। प्रचलित शिक्षा प्रणाली किसी हद तक अपना अस्तित्व बनाए भी रह सकती है, पर उसकी आड़ में युग-शिक्षण को रोका नहीं जा सकता।

युग शिक्षण में यह विषय आवश्यक है:- (१) व्यक्तित्व का समग्र विकास-परिष्कार ।(२) समाज संरचना और उसके साथ जुड़े हुए प्रचलनों का नव निर्धारण। (३)अर्थ व्यवस्था। (४) सुलभ आजीविका कैसे उपलब्ध हो ? (५) मनुष्य के चिंतन, चरित्र और व्यवहार में शालीनता का समावेश किस प्रकार बढ़ता चले ? (६) परिवारों की वर्तमान संरचना में क्या सुधार-परिवर्तन किया जाए ? (७) शारीरिक और मानसिक रुग्णता से सुनिश्चित छुटकारा किस प्रकार मिले ? (८) अवांछनीयता से किस प्रकार निपटा जाए ? (९) अब की अपेक्षा कहीं सुखद और सरल परिस्थितियों का निर्धारण कैसे किया जाए ?(१०) सहकारिता और सद्भावना का क्षेत्र कैसे बढ़े ?(११) तत्व दर्शन क्षेत्र में परिष्कार विरोधी मान्यताओं का समीकरण कैसे किया जाए ? (१२) राजतंत्र और धर्मतंत्र की उभयपक्षीय समर्थ शक्तियों को किस प्रकार नए युग के अनुरूप साँचे में ढाला जाए ?

यह कुछ थोड़े से विषयों की ही चर्चा है। इन्हीं विषयों में से प्रत्येक की अनेक शाखाएँ- प्रशाखाएँ फूटती हैं और वे अपने आपको एक स्वतंत्र विषय-क्षेत्र घोषित करती हैं। ऐसी दशा में युग शिक्षा का

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

पुस्तकीय, मौखिक और व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करना इतना बड़ा काम हो जाता है, जिसे वर्तमान शिक्षा तंत्र की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक और वजनदार कहा ही जाएगा।

विलंब से बनने वाले किले या महल की तुलना में यही अच्छा है कि आज की आवश्यकता पूरी कर सकने वाली झोपड़ी का ढाँचा अपने ही हाथों, अपने साधनों से खड़ा कर लिया जाए।

युग साहित्य का सृजन इस संदर्भ में प्रत्यक्ष कार्य है, ताकि अभिनव प्रसंग की पृष्ठभूमि और रूपरेखा के संबंध में जिन बातों की अनिवार्य रूप से तात्कालिक आवश्यकता है, उसे पूरा न सही, मार्गदर्शक रूप में तो प्रस्तुत किया ही जा सके। लोग उपयोगिता समझेंगे, तो उस प्रयोग को विस्तार देने में भी उत्साह प्रदर्शित करेंगे।

प्रदर्शनियाँ इसीलिए लगाई जाती हैं कि उन्हें देखकर लोग किसी सुव्यवस्थित विषय की जानकारी कम समय में प्राप्त कर सकें। अपनी सामर्थ्य और कार्य की विशालता का मध्यवर्ती तालमेल जिस प्रकार बैठ सकता था, उसी को इन दिनों अपनी सूझ-बूझ और प्रभाव के अनुरूप प्रस्तुत किया जा रहा है।

युग निर्माण योजना, मथुरा और शांतिकुंज हरिद्वार से ऐसा साहित्य प्रकाशित करना आरंभ कर दिया गया है, जो प्रस्तुत समस्याओं के अनेकानेक विषयों पर प्रकाश डालता है। इन विषयों के संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण से काम न चलेगा, उसका अनेक भाषाओं में अनुवाद और प्रकाशन होना चाहिए। सीमित लेखन भी पर्याप्त नहीं। अब हर विषय को अनेक तर्कों, प्रमाणों और उदाहरणों के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता अनुभव की जाती है। अगले दिनों युग साहित्य के ऐसे ही विस्तार की आवश्यकता है। बिना किसी प्रतीक्षा के वर्तमान साधनों से ही उसका शुभारंभ कर दिया गया है। आशा यह रखी गई है, कि रोपा गया यह अंकुर अगले दिनों बट-वृक्षों जैसा विशाल कलेवर धारण करेगा।

इस कार्यक्रम में कितनी ही कठिनाइयाँ हैं। एक यह कि अपने देश की दो तिहाई जनता अशिक्षित है, वह साहित्य का लाभ कैसे

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

उठाए ? फिर इस घोर मँहगाई के जमाने में आर्थिक कठिनाइयों से ग्रस्त अशिक्षित स्तर की जनता उसे किस आधार पर खरीदे ? थोड़े से जो शिक्षित बच जाते हैं, वे भी मनोरंजन के लिए चटपटा साहित्य भर खरीदते हैं। युग साहित्य में ऐसा कुछ न रहने पर उन पर भी जबरदस्ती कैसे लादा जाए ? एक तो युग साहित्य का लेखन भी मात्र युगद्रष्टा के ही बलबूते का काम है। दूसरे उसके प्रकाशन में बड़ी पूँजी लगती है। इतने पर भी बिक्री की माँग अत्यंत धीमी रहने से उसका प्रचार-प्रसार कैसे हो ? मँहगे मूल्य की बढ़िया सजधज वाली पुस्तकें छापी जाएँ, तो उन्हें या तो सरकारी शिक्षा तंत्र के ऊपर अतिरिक्त सुविधा शुल्क देकर थोपा जा सकता है, या फिर कोई संपन्न अपनी आलमारियों की शोभा बढ़ाने के लिए उसे खरीद सकते हैं। यह समूची विडंबना भी ऐसी है, जिसके कारण लेखन, प्रकाशन, मुद्रण, विक्रय आदि सभी ओर से अवरोध खड़े हो जाते हैं।

आवश्यकता हर भाषा में स्थानीय मन:स्थिति और परिस्थिति के साथ ताल-मेल बिठाने वाले साहित्य सृजन की है। कठिन और असंभव दीखने वाले इस माध्यम को, सर्वत्र निराशा दीख पड़ने पर भी इन्हीं दिनों आरंभ कर भी दिया गया है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

एक लाख अध्यापकों द्वारा विद्या विस्तार का श्रीगणेश

युग साहित्य के विक्रय को महत्व न देते हुए सोचा गया है कि उसे हर शिक्षित को पढ़ाने और हर अशिक्षित को सुनाने की एक ऐसी योजना अपनाई जाए, जो अन्यत्र कदाचित् ही कहीं और क्रियान्वित होती देखी जाती है।

युग-शिल्पियों में से प्रत्येक को कहा गया है कि वे न्यूनतम २० पैसा नित्य का अंशदान और दो घंटे का समयदान प्रस्तुत ज्ञानयज्ञ के लिए नियमित रूप से दें। इस पैसे से हर महीने नया छपने वाला साहित्य खरीदते रहें। उसे स्वयं तो पढ़ें ही, परिवार वालों को तो पढ़ाएँ या सुनाएँ ही, झोला पुस्तकालय योजना के अंतर्गत अपने परिचय क्षेत्र में शिक्षितों से संपर्क साधें और युग साहित्य बिना मूल्य घर बैठे पहुँचाने, पढ़ लेने पर वापस लेने एवम् अगली पुस्तकें पढ़ने के लिए देने का क्रम चलाएँ।

यह सिलसिला सदा-सर्वदा चलता रह सकता है। पढ़ने वाला बिना पढ़ों को सुनाता भी रह सकता है। दो ऐसे व्यक्ति साथ जुड़े, तो सौ शिक्षित सदस्यों को पढ़ा कर, दो सौ बिना पढ़ों को सुनाकर तीन सौ की एक मंडली बना सकते हैं। उसका सुसंतुलन एक युग-शिल्पी के बीस पैसे नित्य और दो घंटे समयदान के माध्यम से बिना किसी कठिनाई के गतिशील रह सकता है। यह सारा साहित्य, संचालक की घरेलू लाइब्रेरी से लेकर, स्वजन-संबंधी, परिचित-पड़ोसी बिना किसी प्रकार का खर्च किए, दीर्घ काल तक पढ़ते और पढ़ाते रह सकते हैं।

कहने-सुनने में योजना अटपटी-सी लगती है, पर कार्य करने वाले के लिए इस संसार में कुछ भी कठिन नहीं है। शांतिकुंज के साथ जुड़े हुए लोगों में से अधिकांश इस प्रक्रिया को धर्म-कर्तव्य, एक उच्चस्तरीय परमार्थ समझकर श्रद्धापूर्वक अपनाए रहते हैं। इस आधार पर युग साहित्य के पाठकों की संख्या करोड़ों तक पहुँच चुकी है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

भले ही उसे खरीदने वालों की संख्या सीमित ही रही हो।

अखंड-ज्योति अपने मिशन की प्रमुख हिंदी मासिक पत्रिका है। वह अन्य भाषाओं के अनुवादों समेत प्राय: पाँच लाख की संख्या में छपती है। इनके पाठकों को निर्देश है, कि हर अंक प्राय: पाँच के द्वारा पढ़ा या सुना ही जाए। इस प्रकार पाँच लाख पत्रिका प्राय: पच्चीस लाख पाठकों द्वारा पढ़ी या सुनी जाती है। मिशन के सूत्र-संचालक, इसी को अपनी संरचनात्मक संपत्ति मानते हैं और पूरा-पक्का विश्वास जताते हैं कि इतनी भुजाओं के बलबूते, समय की माँग का एक बड़ा भाग निश्चित रूप से पूरा किया जा सकेगा।

प्राचीनकाल के विद्या-विस्तारक न केवल छात्रों को पढ़ाकर छुटकारा पा जाते थे, वरन् उन्हें ढूँढ़ने, इकट्ठा करने, उत्साह भरने के कार्य दूसरों की सहायता की अपेक्षा किए बिना भी, अपने बलबूते ही कर लेते थे। साधनों की, सहयोग की अपेक्षा तो हर काम में रहती है। विद्या-विस्तार में उसके बिना ही काम चल जाए, यह नहीं हो सकता। इतने पर भी यह निश्चित है, कि समर्थ चुम्बक अपने इर्द-गिर्द बिखरे लोहे के कणों को खींचने-घसीटने और अपने साथ चिपका लेने में अकेली क्षमता के बलबूते भी सफल होकर रहता है।

विद्या-विस्तार की अभिनव योजना के क्रियान्वयन में भी इसी तथ्य को मान्यता देते हुए समूचा ताना-बाना बुना गया है। पच्चीस लाख शिरों और पचास लाख भुजदंडों में से अधिकांश निष्क्रिय-निरुत्साहित रहें, संकीर्ण स्वार्थपरता की कीचड़ से इस आपत्तिकाल की पुकार सुनकर भी बाहर न निकलें, तो भी विश्वास किया गया है, कि न्यूनतम एक लाख परिजनों को तो युग चेतना का आलोक वितरण करने के कार्य में जुटाया ही जा सकेगा। यह विश्वास, भावुक कपोल-कल्पना के आधार पर नहीं उभरा है। अब तक प्राय: अस्सी वर्ष जी लेने और निरंतर सेवा-संगठन में निरत रहने पर जो अनुभव एकत्रित किए हैं, उनकी साक्षी एवं छत्रछाया में यह पूरी-पूरी गुंजाइश है, कि युग-शिल्पयों का पूरा समय न निकल सके, तो भी दो-चार घंटे

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

आसानी से निकाले और आपत्तिकालीन आवश्यकता में लगाए जा सकते हैं।

समयदान, अंशदान यह दो अनुबंध ऐसे हैं, जिन्हें प्रज्ञा परिजनों के लिए अपने-अपने क्षेत्र में नियोजित किए रहना एक प्रकार से अनिवार्य कर दिया गया है।

भावना शून्य निष्ठुरों की संकीर्णता ही इतनी बोझिल रहती है, कि उसके रहते व्यस्तता-अभावग्रस्तता का बना-बनाया, गढ़ा-गढ़ाया बहाना सदा-सर्वदा एक रस बना रहता है, उन पर दूसरों का हड़पने भर की हविश छाई रहती है। अपना देना तो मानों बज्रपात की तरह असह्य हो ? ऐसे लोग अपने परिवार में भी हो सकते हैं, पर यह विश्वास किया गया है कि पच्चीस लाख में से एक लाख ऐसे अवश्य निकल आएँगे, जो इस आपातकाल में बीस पैसे और दो-चार घंटे नित्य का समय लोक मंगल के लिए लगाते रह सकें।

यह समय और पैसा अपने ही संपर्क क्षेत्र में विद्या विस्तार में खर्च किया जाना है। किन्हीं अन्य को देने की आवश्यकता नहीं है। अपने हाथों अपना समय और पैसा खर्च करने में इस बात की आशंका नहीं रहती कि कहीं कोई ठग तो नहीं रहा है ?

सेवा साधना का यह क्रम अपनाकर, आरंभ से ही एक लाख अध्यापक प्रति सौ के हिसाब से एक करोड़ छात्रों से संपर्क साधने और उन्हें नवयुग के अनुरूप प्रेरणा देने में समर्थ हो सकेंगे। यदि आशा से अधिक परिणाम निकलने आरंभ हो गए, तो पाँच लाख परिजन पाँच करोड़ को भी झकझोरने, हिलाने, घसीटने और उठाकर खड़ा कर देने में समर्थ हो सकते हैं। यही बात यदि संपर्क क्षेत्र के वर्तमान पच्चीस लाख परिजनों तक लागू होने लगे, तो समझना चाहिए कि पच्चीस करोड़ को विद्यादान करने का सिलसिला चल पड़ा।

अपने घर-परिवार की परिधि के भीतर क्या हो सकता है ? यह अनुमान लगाते हुए यह सब सोचा जा रहा है। पर इतना ही छोटा अनुबंध बँधा रहे, यह संभव नहीं। जब चोर-उचक्के, नशेबाज, गुण्डे, उच्छृंखल, व्यभिचारी अपने-अपने संपर्क में कितनों को ही नए सिरे

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

से प्रभावित करते और साथी-सहयोगी बनाते देखे गए हैं, तो कोई कारण नहीं कि उच्च उद्देश्यों पर सच्चे मन से निष्ठा रखने वाले, चिंतन को क्रिया के साथ जोड़ने वाले यदि उमंगों में लहराने लगें, तो अपने जैसे अनेकों को खींच-घसीट न सकें, परिवार को बढ़ा न सकें ?

प्रज्ञा परिजनों को एक से पाँच, पाँच से पच्चीस, पच्चीस से एक सौ पच्चीस बनने के लिए प्रयत्नशील होने के लिए पूरी तरह उकसाया गया है। एक से पाँच की गुणन प्रक्रिया यदि सचमुच पिल पड़े, तो चार-पाँच छलांगों में ही देश की अस्सी करोड़ जनता को सृजन चेतना से अनुप्राणित किया जा सकता है। चूँकि अपना आंदोलन सार्वजनीन, सार्वभौम, सभी जातियों और सभी मान्यताओं वालों के लिए समान रूप से खुला है, तो किसी संकुचित क्षेत्र तक सीमित रहने की आशंका तो रहती ही नहीं। निष्कर्ष यही निकलता है, कि युग चेतना सूर्य किरणों की तरह आरंभ कहीं से क्यों न हो, अंततः विश्वव्यापी बन कर रहेगी।

संजीवनी विद्या को व्यापक बनाया जाए

यहाँ चर्चा जीवंतों और प्राणवानों की हो रही है, जिनके लिए अपनी गाड़ी धकेलने में कोई हैरानी नहीं पड़ती और जो दूसरों को सहारा दे सकने में भी समर्थ हैं। भेड़ तक, ऊन का उपहार लिए प्रस्तुत रहती हैं। पेड़ों को अपनी पत्तियों, लकड़ियों और फल-फूलों की संपदा बाँटने में संकीर्णता नहीं होती। फिर मनुष्य में तो उदारता का कुछ अंश होना ही चाहिए। सोचते हैं कि हजार पीछे एक तो ऐसा होगा ही, जिसे मानवी गरिमा का स्मरण हो, जो भलाई करने और विकृतियों के निराकरण में किसी न किसी काम आए।

आठ घंटे कमाने, सात घंटे सोने और पाँच घंटे जिधर-तिधर भागदौड़ करते रहने के लिए सुरक्षित रख लिए जाएँ, तो भी २० घंटे में दिनचर्या भली प्रकार निभ जाती है। चार घंटे परमार्थ-प्रयोजनों में निरंतर लगाते रहने के लिए उनके पास भी बच जाता है, जो रोज कुआँ

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

सरकारी पेंशनरों की संख्या कम नहीं, जो मात्र पचपन वर्षों में ही पेंशन ले लेते हैं और कम से कम अस्सी वर्ष की आयु तक शारीरिक अथवा मानसिक श्रम करने की स्थिति में रहते हैं। यदि वे अंतरात्मा की पुकार सुन सकें, तो युग धर्म की चुनौती स्वीकार करने में अपने बचे जीवन को बिना किसी कठिनाई के लगा सकते हैं।

जिनके लड़के-बच्चे कमाने लायक हो गए, उनमें से भी असंख्य निष्क्रिय जीवन बिताने लगते हैं, आवारागर्दी में समय गुजारते हैं। एक बड़ा वर्ग ऐसा भी है, जिसने पिछले दिनों पर्याप्त पैसे कमा लिया अथवा उत्तराधिकार में प्राप्त प्रचुर संपत्ति हथिया ली। यदि वे चाहें, तो इस संपदा को बैंक में जमा करके उसके ब्याज से शेष जीवन एवं बच्चों का उत्तरदायित्व भली प्रकार पूरा कर सकते हैं। इनके पास समय ही समय है। यदि उनका मन कीचड़ में उगने वाले कमल की तरह तनिक ऊँचा उठ सके, आदर्श और चिंतन की ओर मुँह मोड़ सके, तो समझना चाहिए कि युग प्रशिक्षकों की एक नई सेना मोर्चे पर आ खड़ी हुई। साधु, ब्राह्मण, पुरोहित वर्ग तो धर्म के आधार पर ही आजीविका अर्जित करता है। उसके लिए तो अनिवार्य कर्त्तव्य बन जाता है कि नमक हलाल तो कहलाते ही रहें। भजन करने का बहाना तो ऐसा नहीं है, जिसकी आड़ में जन साधारण की श्रद्धा और संपदा का दोहन किया जाता रहे।

महिलाओं में से भी कुछ न कुछ ऐसी हो सकती हैं, जिन्हें रसोईदारिन, चौकीदारिन, धोबिन स्तर के कामों से थोड़ी फुरसत मिल सकती है। वे युग-धर्म की माँग में अपना थोड़ा-बहुत समयदान, अंशदान तो लगा ही सकती हैं। विधवाओं-परित्यक्ताओं का एक बड़ा वर्ग भी जिस-तिस की बेगार भर करता रहता है। जिनके विवाह सामाजिक विडंबनाओं ने संभव नहीं होने दिए अथवा जिनके मन में अपने पिछड़े समुदाय के प्रति किसी कोने में दर्द है, वे प्रायः अविवाहित ही रह जाती हैं। निराश्रित होने पर नौकरी करती और उस कमाई का भाई-भतीजों पर उड़ेलती रहती हैं। ऐसी देवियाँ, यों अपने को दुर्भाग्यग्रस्त मानती हैं, पर वे वस्तुतः सौभाग्यवती हैं, जिन्हें बंदी-

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

दासी का जीवन जीने की विवशता से भगवान ने बचा लिया ! घर में बहुएँ आ जाने पर तो सास वर्ग की महिलाएँ प्रौढ़ होते हुए भी काम-धंधों से छुटकारा पा जाती हैं। संपन्न परिवारों में अच्छी कमाई होने के कारण नौकर-चाकर सब काम कर देते हैं। घर की महिलाओं के पास तो टी.वी. देखने, रेडियो सुनने, उपन्यास पढ़ने जैसे बेकार काम ही समय काटने के लिए शेष रह जाते हैं। यह वर्ग भी इतना बड़ा है, जो चाहे तो महिला उत्कर्ष के लिए बहुत कुछ कर सकता है।

महिला समुदाय के उपरोक्त वर्ग ऐसे नहीं हैं, जो काम की अधिकता की बात कहकर महिला-उत्थान की सामयिक महत्ता आवश्यकता को नकारने के लिए कोई समझ में आ सकने योग्य बहाना गढ़ सकें।

इस समय प्रजनन के भार से धरती त्राहि-त्राहि कर रही है और समाज का ढाँचा बुरी तरह लड़खडा रहा है। ऐसे आपत्ति काल में जो नर-नारी बच्चे जनने से हाथ सिकोड़ें, उन्हें समझदारों और दूरदर्शियों में गिना जा सकता है। यदि ऐसा कहीं संभव हो, वहीं यह संभावना साकार होती है कि दोनों एक-एक मिलकर ग्यारह का उदाहरण बनें। एक दूसरे को ऊँचा उठाने में सहायता करें। बच्चों का झंझट न होने पर दोनों मिलकर युग धर्म का निर्वाह कर ग्यारह गुना काम कर सकते हैं।

प्रसव पीड़ा में १३ प्रतिशत महिलाएँ मर जाती हैं और बड़ी संख्या में आजीवन रुग्णता-दुर्बलता का शिकार बनती हैं। उन पतियों पर लानत को धूलि कौन फेंके, जो पत्नी की आधी जिंदगी अर्ध मृतकों के स्तर की व्यतीत करने के लिए बाधित करते हैं। अपना अर्थ भार दूना-चौगुना बढ़ाते हैं। सुसंस्कार दे सकने की योग्यता न होने पर बच्चों को कुसंस्कारी बनाते हैं और समाज के लिए असंख्य समस्याएँ खड़ी करते हैं। यदि बच्चे उत्पन्न करने की सामयिक मूर्खता से बचा जा सके, तो इन दिनों भी अनेक महिलाएँ नारी उत्कर्ष के कार्य में जुट सकती हैं और अपने संपर्क क्षेत्र में एक प्रकार से अभिनव क्रांति उत्पन्न कर सकती हैं।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

प्रश्न व्यस्तता, अभावग्रस्तता आदि का नहीं, वरन् एक ही है कि जन-जन पर कृपणता, निठुरता, घिनौनी स्वार्थपरता के रूप में शैतान ही छाया है। वही आदर्शों के निमित्त कुछ संयम बरतने और परमार्थपरक सेवा-साधना करने के मार्ग में अवरोध बनकर खड़ा होता है। यदि किसी प्रकार उसे घटाया-हटाया जा सके, तो समझना चाहिए कि शिक्षित-अशिक्षित स्तर के कोई भी नर-नारी किसी न किसी हद तक युग अध्यापक की छोटी-बड़ी भूमिका निभा सकते हैं। यदि ऐसा माहौल बन सके, तो समझना चाहिए कि महाकाल की महती आवश्यकता का एक बड़ा अंश सरलतापूर्वक संपन्न हो गया।

कोई समय था, जब सभी देवालय, गुरुकुल, आरण्यक, आश्रम, तीर्थ इसी एक काम में अपनी क्षमता नियोजित किए रहते थे। उनमें बड़ी संख्या में ब्रह्मर्षि, राजर्षि, देवर्षि, ऋषि-मनीषी रहा करते थे और वहाँ पहुँचने वालों को उनकी योग्यता एवं परिस्थिति के अनुरूप इस प्रकार का शिक्षण दिया करते थे, ताकि हर आगंतुक को ऊँचा उठने-आगे बढ़ने में सहायता मिल सके। यही कारण था कि बालकों से लेकर वृद्धों तक को संजीवनी विद्या का ज्ञान रहता था और वे उसका अनुकरण करते हुए उस स्तर के बनते थे, जिन्हें सच्चे अर्थों में देव मानव कहा जा सके। ऐसे लोग जहाँ भी बसेंगे। वह धरती सहज ही स्वर्गोपम कही और समझी जाने लगेगी। ऐसा वातावरण पुरातन काल में तो था ही, अब उसी प्रक्रिया को फिर अपनाया जाने लगे, तो इसमें तनिक भी संदेह नहीं किया जाना चाहिए कि सतयुग की वापसी होकर रहेगी।

प्रश्न शिक्षा पद्धति एवं शिक्षकों का है, उसे शांतिकुंज ने पूरा करने का निश्चय कर लिया है। इसके लिए स्वाध्याय-सत्संग का ही नहीं, उन छोटे-बड़े आयोजनों-समारोहों की भी व्यवस्था बनाई गई है, जिनके आकर्षण से जन-समुदाय को एकत्रित और प्रशिक्षित किया जा सके।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

महाविद्या का उदय और अभ्युदय

अग्नि की ऊर्जा जहाँ भी उत्पन्न होती है, वहाँ वह समीपवर्ती वातावरण को ऊर्जायुक्त बनाए बिना नहीं रहती है। सुगंध का भी यह उपक्रम है, वह जहाँ भी रखी जाती है, समीपवर्ती क्षेत्र में भी वैसी ही गंध फैलाती रहती है। विद्या के संबंध में भी यही समझा जाना चाहिए। गंगा भले ही एक चट्टान पर उतरी हो, पर उसकी जलधारा दूर-दूर तक शीतलता-सरसता का विस्तार करती रहती है। यों दुर्बुद्धि भी अपने समीपवर्तियों को लपेट में लेती है, किंतु सदाशयता का अपना विशेष क्षेत्र और स्वभाव है। वह मलयानिल की तरह दूर-दूर तक अपने प्रभाव का परिचय देती है। सूर्य का प्रकाश भी धरती के हर कोने में पहुँचता रहता है। प्रज्ञा का स्वभाव भी इसी प्रकार विस्तृत क्षेत्र को प्रभावित करने का है।

बीसवीं सदी में विज्ञान को आगे रखकर किए गए अनाचारों पर नियंता को बहुत क्षोभ है। वे अधिक समय उस अवांछनीयता को उसी रूप में बनी नहीं रहने देना चाहते। यों व्यापक परिवर्तनों की तैयारी हो चली है। इक्कीसवीं सदी के उज्ज्वल भविष्य की संरचना इसी आधार पर होने जा रही है। इस प्रक्रिया का प्रमुख कार्य एक ही होगा, जिसे प्रज्ञा युग का अवतरण कह सकते हैं। विचारक्रांति, ज्ञानयज्ञ जैसे नाम भी इसी को दिए गए हैं। यदि इसी को विद्या विस्तार कहा जाए, तो भी कोई हर्ज नहीं।

उदरपूर्ति के लिए प्रयुक्त होने वाली विविध जानकारियों का भानुमती वाला पिटारा सिर पर लादे हुए, शिक्षा दिन-दिन प्रगति करती जा रही है। उसे बेचने वाली दुकानें गली-मुहल्लों, गाँव-नगरों में तेजी से खुलती चली जा रही हैं। अध्यापकों की विशाल संख्या उसी प्रयोजन के लिए नियुक्त निरत है। छात्रों की भी कमी नहीं। वे नौकरी पाने की लालसा में बड़ी संख्या में वहाँ पहुँचते हैं। कभी तो प्रवेश मिलना तक कठिन हो जाता है। जो सफल नहीं हो पाते, नौकरी नहीं पा लेते, वे निराशा और खीझ से उद्विग्न होकर ऐसी राह पकड़ते देखे गए हैं, जिसे अनुचित और अवांछनीय ही कह सकते हैं। प्रस्तुत शिक्षा

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

प्रणाली की अपूर्णता को देखते हुए क्रमश: उसके प्रति क्षोभ भी बढ़ता जाता है।

प्रस्तुत अनौचित्य से निपटने और औचित्य को सक्रिय करने के लिए जिस विद्या की इन दिनों महती आवश्यकता है, इक्कीसवीं सदी के साथ-साथ दिग्-दिगंत को आलोकित करने के लिए वह उषाकाल की तरह उभरती चली आ रही है। उसका विस्तार होना ही है। उसे व्यापक बनना ही है। शिक्षा के लिए साक्षरता संपादन की अनिवार्य आवश्यकता है, किंतु विद्या के साथ जुड़ी हुई आदर्शवादी उत्कृष्टता तो सीधे अंत:करण में उतर जाती है। निरक्षरता भी उसमें बाधक नहीं होती। शालीनता, सज्जनता, उत्कृष्टता, आदर्शवादिता के सिद्धांतों को हृदयंगम करने के लिए साक्षरता अनिवार्य नहीं है।

क्षेत्र विस्तार को देखते हुए इस सरंजाम को जुटाने के लिए बड़े परिमाण में प्रयत्नशीलता अपनानी होगी। प्रश्न किसी क्षेत्र या देश का नहीं, वरन् समूचे संसार को इसी की प्यास है। इस संदर्भ में शिक्षित-अशिक्षित, निर्धन और धनाध्यक्ष, सेवक और स्वामी, नर और नारी प्राय: सभी स्तर के लोग संसार भर में एक जैसी रटन लगाए हुए हैं। सभी एक जैसी तृषा और आवश्यकता अनुभव करते हैं। मान्यताओं, भावनाओं और आदतों में अनौचित्य का समावेश हो जाने से अगणित समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं। गंदगी की सड़न से अवांछनीय स्तर के कृमि-कीटक उपजते हैं और बीमारियों के विषाणु टिड्डी-दल की तरह दौड़ पड़ते हैं। कुरूपता और दुर्बलता तो उसके साथ जुड़ी ही रहती है। यही है दुर्गति की स्थिति, जो हर जगह न्यूनाधिक मात्रा में देखी जा सकती है। समाधान, निराकरण इसी का होना है, अस्तु न केवल कचरे को बुहारना होगा, वरन् उस स्थान पर चूने की पुताई, गोबर की लिपाई अथवा फिनायल जैसे कृमिनाशकों की छिड़काई भी आवश्यक होगी। यह दोनों कार्य विद्या विस्तार से ही संभव है। यहाँ विद्या शब्द का सही अर्थ भी समझना होगा। वह साक्षरता तक सीमित नहीं है, वरन् दूरदर्शी विवेकशीलता और ममतामयी भाव संवेदना के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ती है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

विद्या के लाभ परोक्ष हैं। उसके सहारे विवेक उभरता है। नीर-क्षीर विवेक के राजहंसों जैसी प्रवृत्ति उभरती है, व्यक्तित्व परिष्कृत होता और प्रतिभा निखरती है। संपन्नता भले ही सीमित रहे, पर शालीनता इतनी ऊँचाई तक उठ जाती है जिसे देव मानव की संज्ञा मिल सके, जिसके धारण कर्त्ता को नर-रत्नों में गिना जा सके। सुधारक, उद्धारक, ऐसों को ही समझा जाता है। यह सभी विशेषताएँ उद्देश्य स्तर की होती हैं। इसलिए औसत आदमी उसकी ओर ध्यान नहीं देता। आत्म संतोष, लोक सम्मान और दैवी अनुग्रह की महान महत्ता के संबंध में जिनने कभी सुना-समझा तक नहीं, वे भला उसे पाने के लिए ही क्यों प्रयत्न करेंगे ? इन दिनों तो पैसा ही परमेश्वर बना हुआ है। अहंकार का उन्माद इस कदर छाया हुआ है, कि उसके लिए समय, श्रम और साधनों को बड़ी से बड़ी मात्रा में निछावर करने के लिए लोग आकुल-व्याकुल देखे गए हैं। वासना, तृष्णा और अहंता के अतिरिक्त जब और कुछ सूझ ही न पड़े-लिप्सा, लालसा और तृष्णा की ललक जब गहरी खुमारी के रूप में चढ़ी हुई हो, तो विद्या के-ब्रह्म विद्या के-आत्म ज्ञान के स्वर्गीय दृष्टिकोण एवं जीवन मुक्ति जैसे उच्च स्तर के संबंध में कोई कुछ सुने-समझे भी क्यों ? उस दिशा में कुछ करने एवं नियम बनाने की बात तो बहुत पीछे आती है।

जो हो, आज का गुजारा भले ही इस सड़ी कीचड़ में लोट-पोट करते हुए भी हो सकता है, पर कल स्वच्छ वातावरण की आवश्यकता पड़ेगी। उसके बिना उद्धार-निस्तार भी तो नहीं। इतने पर भी यह भूल नहीं जाना चाहिए कि कार्य क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। साथ ही दुरूह भी। उसे संपन्न करने में मानवी प्रयत्न तो एक सीमा तक ही सफल हो सकते हैं। प्रश्न समूचे संसार का है। समस्या ६०० करोड़ मानवों की है। उनका प्रवाह उल्टी दिशा में चल रहा है। वे ऐसे अंधड़ के साथ उड़ रहे हैं, जो कभी भी कहीं भी करारी पटखनी दे सकता है और हड्डी-पसली तोड़ डालने जैसा संकट खड़ा कर सकता है। इसलिए प्रचलन का परिवर्तन एक प्रकार से अनिवार्य हो गया है।

६०० करोड़ मनुष्यों का चिंतन प्रवाह मानवी मर्यादाओं के

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

उल्लंघन का अभ्यस्त हो चले, चिंतन में निकृष्टता और चरित्र में भ्रष्टता का अनुपात असाधारण रूप में बढ़ चले, तो उस विशाल कार्य क्षेत्र में लगभग पूरी तरह उलट देने का कार्य नियंता की नियति ही कर सकती है, भले उसे संपन्न करने में किन्हीं व्यक्तियों को श्रेय-सौभाग्य पाने का अवसर मिलने लगे।

"विद्या" की गरिमा का माहात्म्य बताते हुए आप्त जनों ने बहुत कुछ कहा है-"विद्ययामृतमश्नुते", "सा विद्या या विमुक्तये", "विद्या ददाति विनयम्" आदि-आदि। मनुष्य के गुण, कर्म, स्वभाव में चिंतन, चरित्र और व्यवहार में, जो उत्कृष्ट आदर्शवादिता का समावेश कर सके, वही विद्या है। संजीवनी विद्या भी इसी का नाम है। कई व्याख्याकार इसे जीवन जीने की कला कहते हैं। इसी के साथ सुख-शांति और प्रगति के सभी सूक्ष्म तंतु जुड़े हुए माने जाते हैं। इसकी उपेक्षा करने पर न भौतिक प्रगति संभव होती है और न आध्यात्मिक उन्नयन की बात बनती है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

जले दीपक ही बुझों को जलाएँगे

कथा है कि महाप्रलय के दिनों सर्वत्र समुद्र का खारा पानी ही भरा पड़ा था। उसकी तली में गहरी कीचड़ भी भरी हुई थी। उसी बीच एक चमत्कार हुआ। पानी के ऊपर एक कमल उभरकर खिल आया। उसमें सहस्त्र पंखुड़ियाँ थीं। बात इतने पर ही समाप्त नहीं हुई। कमल के मध्य पर ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए। वे वेदज्ञान से सृष्टि को गुंजित करने लगे। साधन और सौंदर्य उसी गुंजन के प्रभाव से उभरे-जुड़े और चेतन सृष्टि उसी प्रयास के फलस्वरूप विनिर्मित हो चलीं।

पौराणिक मिथक की वास्तविकता के संबंध में दो मत हो सकते हैं पर इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि अपने समय की विपन्न परिस्थितियों में चमत्कार जैसा उद्भव होने ही वाला है। सहस्त्रदल खिलने ही वाला है। उसमें ब्रह्म चेतना का ऐसा प्रवाह निःसृत होने वाला है, जो उलटे को उलट कर सीधा कर सके, सुखद संभावनाओं का अभिनव सृजन इस स्तर का बन पड़े, जिसे कीचड़ से उभरा कमल कहा जा सके।

इक्कीसवीं सदी के आरंभिक बुल-बुले शांतिकुंज की जमीन को फोड़कर उभरने और उबलने लगे हैं। अगले दिनों यह एक निर्झर के रूप में गति पकड़ ले, तो किसी को भी आश्चर्य नहीं करना चाहिए। हल्की भाप आरंभ में धीरे से उठती है, पर वह कुछ ही समय में घटा-टोप बनकर बरसने लगती है। इसे आश्चर्य नहीं तो और क्या कहें ? राई जितने छोटे बीज का विशाल वट-वृक्ष के रूप में सुविस्तृत हो जाना क्या कोई कम आश्चर्य की बात है ? यह अपनी सृष्टि ऐसे ही आश्चर्यों का प्रदर्शन पग-पग पर करती है। सच तो यह है कि इस संसार में जो कुछ हो चुका है, जो हो रहा है, जो होने वाला है, उसे सृष्टि के चमत्कारों की श्रृंखला के अतिरिक्त और कुछ कहा नहीं जा सकता। बाल की नोक जितना क्षुद्र शुक्राणु यदि साढ़े पाँच फुट का सर्वांग सुंदर मनुष्य बन सकता है, तो चमत्कार के अतिरिक्त और क्या कहा जाए ? ग्रह-नक्षत्र अधर में टँगे हैं और द्रुत गति से घूमते रहते हैं, तो इसे अघटित का घटित होने के अतिरिक्त और क्या कहा जाए ?

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

मनुष्य स्वल्प है। उसकी सामर्थ्य भी सीमित है। उसकी सूझ-बूझ, प्रयत्नशीलता और सफलता भी सीमित स्तर की ही बनकर रह जाती है, पर भगवान के संबंध में यह बात नहीं है। वे देखते-देखते ऋतुओं में ऐसा परिवर्तन करके रख देते हैं कि उस अलौकिकता को देखकर हतप्रभ ही होकर रह जाना पड़ता है। मनुष्य यदि ऐसा करना चाहे, तो भी उसका पुरुषार्थ वैसा बन ही नहीं पड़ेगा।

अवतारों की पूर्ण श्रृंखला का अवगाहन करने पर भी यही निष्कर्ष निकलता है कि उनका अवतरण असंभव को संभव कर दिखाने के लिए ही होता रहा है। यों निराकार होने के कारण वे प्राणियों की तरह प्रयत्न-पुरुषार्थ नहीं कर पाते, फिर भी मनुष्यों में से ही ऐसे कितने का चयन कर लेते हैं, जिन्हें हवा भर कर नन्हें से गुब्बारे को कद्दू जितना विशाल बनाया जा सके। हनुमानों, अंगदों, अर्जुनों, नारदों, बुद्धों, गाँधियों आदि की इतनी बड़ी श्रृंखला है, जिन्होंने मनुष्य शरीरधारी होते हुए भी ऐसे महान प्रयोजन पूरे कर दिखाए, जिन्हें अद्भुत और अलौकिक कहा जा सके। एक बार तो महर्षि विश्वामित्र ने ब्रह्माजी की बनाई सृष्टि की तुलना में दूसरी नई सृष्टि रच डालने के लिए कमर कस ली थी। ऐसे मामले बुद्धि द्वारा मुश्किल से ही सुलझाए जा सकते हैं। अगस्त्य ऋषि ने तीन चुल्लू में समूचा समुद्र सोख लिया था। ऐसे कृत्यों के पीछे यदि भगवान की शक्ति काम करती दीख पड़े, तो उसे आश्चर्य नहीं मानना चाहिए।

लंबा समय दुर्मति-जन्य दुर्गति सहन करते-करते बीत गया। अब यदि उलट-पुलट कर सही स्थिति में ला देने की योजना बनी है, तो उसे इसलिए असंभव नहीं मान लेना चाहिए कि मनुष्यों के सीमित प्रयास इतने सुविस्तृत कार्य को नहीं कर सकते। मनुष्य के लिए कुछ भी कितना ही कठिन हो सकता है, पर जिसने आकाश में असंख्यों ग्रह-तारक, झाड़ फानूस की तरह अधर में लटका रखे हैं, उसके लिए किसी सदाशयता भरे प्रयोजन को पूरा कर सकना कैसे कुछ कठिन हो सकता है ?

छोटा आरंभ उपहासास्पद तो लगता है, फिर भी इस संभावना

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

को नकारा नहीं जा सकता कि वह कुछ ही समय में कहीं-से-कहीं जा पहुँचे। बुद्ध और गाँधी के आंदोलन आरंभ में नगण्य स्तर के ही थे, पर जब समय ने साथ दिया, तो क्रिया की प्रतिक्रिया इतनी महान हुई कि उसे देखते हुए आश्चर्यचकित ही रह जाना पड़ता है।

युग संधि महापुरश्चरण शांतिकुंज में विगत दो वर्षों से चल रहा है। उसकी शाखा-प्रशाखाओं के रूप में हजारों स्थान और लाखों मनुष्य अनुप्राणित हो चले हैं। अब इस वर्ष से युग शिल्पियों के प्रशिक्षण की प्रक्रिया बड़े रूप में चल पड़ी है, ताकि धीमी गति से चल रहे प्रयासों को राकेट स्तर की तेजी उपलब्ध हो सके। पिछले वर्ष नौ-नौ दिन के और एक-एक महीने के प्रशिक्षण सत्रों की शृंखला चलती रही है, पर इस बार उसे ऐसी गति प्रदान की गई है, जिससे लंबी अवधि में संपन्न हो सकने वाले कार्य अपेक्षाकृत चौगुनी, सौगुनी गति से अग्रगामी बन सकें और उन्हें सन् २००० तक के आगामी वर्षों में पूरा किया जा सके।

विद्यालयों की इमारतें बनती हैं, फर्नीचर इकट्ठा किया जाता है, पर इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि सुयोग्य अध्यापकों का चयन हो और उन्हें अपना काम पूरा करने की ललक निरंतर बेचैन किए रहे। इसके बाद अन्य कार्य तो सरलतापूर्वक संपन्न होते रहते हैं।

सन् ९० के वसंत पर्व से शांतिकुंज में "सघनशक्ति" उत्पन्न करने के अतिरिक्त, उपयुक्त विद्या चेतना के धनी और समर्थ शक्तिशाली अध्यापक प्रशिक्षित-विनिर्मित करने का कार्य आरंभ किया गया है। अखण्ड ज्योति के पाँच लाख परिजनों को प्रशिक्षित करने का कार्य सर्वप्रथम हाथ में लिया गया है। स्थान भी इन्हीं दिनों कुछ बढ़ाया गया है। शांतिकुंज में निवास, भोजन, साधन आदि की व्यवस्था पिछले वर्ष की तुलना में प्रायः दूनी बढ़ाई गई है, पर फिर भी आवश्यकता को देखते हुए उसे कई गुना बढ़ाने की आवश्यकता पड़ रही है। थोड़ा धैर्य रखने पर उसकी पूर्ति हो जाने की संभावना है।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

अधिक लोगों को कम समय में प्राण चेतना से अनुप्राणित करना हो, तो इसके अतिरिक्त और कोई विकल्प शेष नहीं रह जाता कि शिक्षा अवधि को जितना कम करना संभव हो, उतना कर लिया जाए। न्यूनतम की बात सोचें, तो वह अवधि पाँच दिन से कम कदाचित् संभव नहीं हो सकती। इसलिए चालू प्रशिक्षण सत्रों को पाँच-पाँच दिन का कर दिया गया है। तारीख १ से ५, ७ से ११, १३ से १७, १९ से २३, २५ से २९। इस प्रकार हर महीने पाँच सत्र निरंतर संपन्न होते रहेंगे। शिक्षा की दृष्टि से किसी महत्वपूर्ण शिक्षण के लिए यह अवधि बहुत ही कम है, पर जब प्रसंग प्राण-प्रत्यावर्तन का हो, आदान-प्रदान की व्यवस्था को ही प्रमुख माना गया हो, तो कान में कुछ देर की फुसफुसाहट भी बड़े प्रयोजनों को पूरा कर देती है। सीखने और सिखाने वाले दमदार हों, तो रामायण की यह उक्ति भी चरितार्थ हो जाती है, जिसमें कहा गया है कि "गुरु गृह पढ़न गए रघुराई। अल्पकाल विद्या सब आई।"

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

मूर्छना का पुनर्जागरण अनिवार्य है

विश्वव्यापी परिवर्तन और सृजन का दुहरा प्रयोजन पूरा करने के लिए साधारणतया शताब्दियों और सहस्त्राब्दियों का समय चाहिए, पर अब उतनी प्रतीक्षा की गुंजायश रह नहीं गई है। अग्निकांड के समय में लंबी अवधि में पूरी हो सकने वाली योजना नहीं बन सकती। उस अनर्थ को रोकने के लिए धूल, पानी आदि जो कुछ भी मिल सके, उसी के सहारे वह कार्य हाथों-हाथ संपन्न करना पड़ता है। सहमत और उत्सुक छात्रों को पढ़ा देना कठिन नहीं है, पर जो गलती को ही सही मानने का दुराग्रह अपनाए बैठा हो, उसे समझा सकना असंभव तो नहीं, पर कष्टसाध्य अवश्य है। इन दिनों विचार परिवर्तन के सहारे युग परिवर्तन करने के लिए ऐसे प्रशिक्षक चाहिए, जो न केवल वार्तालाप, शंका-समाधान एवं प्रवचनों द्वारा आवश्यक जानकारी दे सकें। वरन् अपनी प्राण-प्रतिभा का प्रयोग करके, उल्टी मान्यता और क्रिया-प्रक्रिया को बलपूर्वक सीधी कर सकें।

प्राचीन काल में वातावरण अनुकूल था। तब उस प्रमुख प्रयोजन के लिए, आवश्यक संस्थानों के लिए इमारतें भी आसानी से बन जाती थीं। गाँव-गाँव छोटे-छोटे देवालय होते थे, जिन्हें पुरोधा संभालते थे और दैनिक कथा-वार्ता एवं पर्व-संस्कार आदि विशेष अवसरों पर, जन-समुदाय के जनमानस की विकृतियों को सुधारते और सदाशयता के बीजांकुर इस प्रकार जमाते थे, जिससे वे समयानुसार फल-फूलों से लदे सुंदर-सुहावने वृक्ष बन सकें।

बच्चे की शिक्षा पाठशालाओं में होती थी। ग्राम-पुरोहित उनका सूत्र संचालन करते थे। यजमान उनकी निर्वाह सामग्री समय-समय पर भिजवाते रहते थे। जिनके लिए अन्न-वस्त्र ही पर्याप्त हों, उनके लिए खर्च ही कितना चाहिए ? बच्चों की पढ़ाई के बदले मुट्ठी भर अन्न देते रहना किसी को भारी नहीं पड़ता था। छात्रों को शिक्षा और विद्या का दुहरा लाभ बिना किसी अड़चन के मिलता रहता था।

बड़ी कक्षाओं के लिए गुरुकुल थे, जिनमें छात्रों के लिए न केवल उच्चस्तरीय शिक्षा की व्यवस्था रहती थी, वरन भोजन-वस्त्र जैसी

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

व्यवस्थाओं का तारतम्य भी बना रहता था।

अध्यापकों, उपाध्यायों, मनीषियों, वानप्रस्थों की शिक्षा आश्रम-आरण्यकों में होती थी। वयोवृद्ध मनीषियों का सामयिक चिंतन और निर्धारण बुद्धिजीवी आश्रमों में चलता रहता था। पुस्तकों की संरचना और अनुवाद, प्रतिलिपि लेखन भी उपरोक्त संस्थानों में संपन्न हो जाता था। उपरोक्त सभी शिक्षण संस्थानों में न केवल बौद्धिक, वरन् व्यावहारिक शालीनता के अभ्यास का अवसर भी मिल जाता था।

विदेशों में ज्ञान चेतना जगाने के लिए परिव्राजकों के लिए विश्वविद्यालय बने हुए थे। वहाँ से परिपक्व होकर ऋषि कल्प परिव्राजक देश देशांतरों में निकल जाते थे और जहाँ, जिस प्रकार के सद्ज्ञान की आवश्यकता समझी जाती थी, वहाँ वैसा ही अध्यापन तंत्र खड़ा कर देते थे। सर्वविदित है कि कुमारजीव जैसे महामनीषियों ने तक्षशिला विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करके चीन, जापान, कोरिया, मंगोलिया, मंचूरिया आदि पूर्वोत्तर क्षेत्र में नव जीवन का संचार किया था। नालंदा विश्वविद्यालय के महामनीषी कौडिन्य ने दक्षिण पूर्व के क्षेत्र तिब्बत, वर्मा, मलेशिया, इन्डोनेशिया, कम्पूचिया, जावा, सुमात्रा आदि को देव संस्कृति का केन्द्र बना दिया था।

समय का कुचक्र ही कहना चाहिए कि आज वह समूचा तंत्र, पुरातन इमारतों के ध्वंसावशेष के रूप में जहाँ-तहाँ अपने पूर्व अस्तित्व का परिचय भर देता है। लोक रुचि उस प्रसंग से हट गई। न पुरोहित रहे, न लोकमानस को जीवंत-जागृत रखने वाले पुरोधा। साधु-ब्राह्मणों की संख्या तो लाखों करोड़ों में है, पर जिन्हें अपने शाश्वत कर्त्तव्यों का ज्ञान है तथा उस प्रकार का कुछ करते भी हैं, उनकी संख्या उँगलियों पर गिनने लायक ही मानी जा सकती है। युग ऋषियों का उत्पादन, निर्माण कहाँ होता है ? उस स्थान को ढूँढ़ पाना भी शोध का विषय बन गया है । न वैसा कुछ पढ़ने में किसी को रुचि है और न पढ़ाने में। कारण कि नौकरी-व्यवसाय आदि में प्रचुर धन कमा लेने की ललक हर किसी को घेरे हुए है। अध्यापक और छात्र भी इसी प्रसंग को पढ़ते-पढ़ाते हैं।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

जब विद्या तंत्र तिरोहित हो गया और उसके हर कोने पर उदरपूर्ति से संबंधित शिक्षा ही कब्जा किए हुए हो, तब सद्ज्ञान के केन्द्रों का संचालन एवं निर्माण कहाँ से बन पड़े ? धर्मशालाएँ बनाकर नाम कमाने वाले अधिक से अधिक इतना कर पाते हैं कि कोई मुफ्त दवा देने वाला औषधालय, सदाव्रत या प्याऊ खुलवा दें। दान-पुण्य की सीमित परिधि इतने ही छोटे क्षेत्र में सिकुड़ कर रह गई है। देवता की प्रसन्नता, स्वर्ग में स्थान सुरक्षित होने की संभावना, जब प्रचुर संपदा का एक राई-रत्ती जितना अंश खर्च कर देने भर से पूरी हो जाती है, तो इतनी दूर की बात कौन सोचे कि विश्व को उन क्रांति-मनीषियों की भी जरूरत है, जो उलटी चाल अपनाए हुए समुदाय को अपनी प्रचंड प्रेरणाओं के बल पर चलने के लिए घसीटें और बाधित कर सकें।

अचिन्त्य-चिंतन का शिकार लोक मानस तो बेतरह तबाह हो ही रहा है। इस अंधड़ से उनकी आँखों में भी धूलि भर गई है, जो पुण्य-परमार्थ की बात सोचने और उस दिशा में कुछ कर सकने की परिस्थितियों में हैं। जब समूचा प्रवाह ही स्वार्थ-साधन के लिए समर्पित है, तो मनीषा और संपन्नता को ही क्या बन पड़ी है, जो लोकहित की बात-सोचें ? जन कल्याण के सरंजाम जुटाए ? उल्टे प्रवाह को मोड़कर सीधी दिशा में ले चलने के लिए लोक मानस को नियोजित क़रने का तारतम्य बिठाएँ ? समय की अनिवार्य आवश्यकता को पूरा कर सकने वाले प्रकाश कण कहीं से उभरते नहीं। नव जागरण के स्वर कहीं से उठते नहीं। ऐसी दशा में घोर निराशा के गर्त में अपने को भी डूब जाने के लिए परामर्श देने की अपेक्षा, यही उपयुक्त दीखता है कि टैगोर के उस गीत को ही गायां-गुनगुनाया जाए, जिसमें उनने कहा था-"एकला चलो रे"।

अकेला चलना कठिन तो है, पर असंभव नहीं। बुद्ध, गाँधी, दयानंद, विवेकानंद, मीरा, चैतन्य, कबीर आदि मंडली गठित करने और साधन जुटाने की प्रतीक्षा में नहीं बैठे रहें, वरन् अपने शरीर और मन मात्र को साथ लेकर उस मार्ग पर चल पड़े थे, जो दर्शकों

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

परामर्शदाताओं को साधनों के अभाव में असंभव जैसा प्रतीत होता था। इस संदर्भ में वे अधिक साहसी दीखते हैं, जो अपने स्वतंत्र चिंतन के आधार पर घोंसला छोड़कर अभीष्ट दिशा में उड़ चलते हैं और सफलता-असफलता की बात ईश्वर-भरोसे छोड़ देते हैं। देवर्षि नारद को भी विश्व-भ्रमण में चल पड़ने की हिम्मत आत्मा और परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कहीं से नहीं मिली थी।

चिर पुरातन को पुनर्जीवित करने के लिए सतयुग की वापसी जैसा भगीरथ प्रयत्न, शांतिकुंज ने अपने एकाकी बलबूते आरंभ किया है। यों दिव्यदर्शी यह भी देखते हैं, कि सत्य में हजार हाथी के बराबर बल होता है। संकल्प के बल पर ब्रह्मा ने समूची सृष्टि रच डाली थी। फिर ऋषि परंपरा इतनी मूर्छित तो नहीं हुई है जिसके पुनरुत्थान की आशा ही छोड़नी पड़े ? लक्ष्मण की मूर्च्छा जगी थी। मानवी गरिमा को पुनर्जीवित करने का संकल्प जगा है, तो कल-परसों यह भी तन कर खड़ा होगा।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

लोकमानस-परिष्कार का प्रशिक्षण

शांतिकुंज एक छोटी-सी भूमि पर बसा, थोड़े-से लोगों द्वारा संचालित एक साधारण सा आश्रम है। उसकी व्यय-व्यवस्था प्रेमी-परिजनों द्वारा नित्य निकाली जाने वाली दस पैसा जैसी छोटी राशि से चलती है। एक घंटा समय नित्य निकालने वाले परिजन भी उसी श्रद्धा के बल पर इतनी भारी गाड़ी को अपने बलबूते घसीटते रहे हैं। सरकारी या धनाध्यक्षों के अनुग्रह की न कभी आशा की गई और न वह इस संकल्प की ओर उन्मुख ही हुआ।

सद्ज्ञान प्रकाश के देवता 'सविता' के रथ में कभी ऋषि, मनीषी, तपस्वी, साधु, ब्राह्मण, वानप्रस्थ और परिव्राजक रूपी सात अश्व मिल-जुलकर दौड़ते थे और उस ऊर्जा एवं आभा से विश्व का कोना-कोना आलोक से भरते थे। उस सांस्कृतिक रथ के निर्माण में समर्थ-संपन्न अपनी श्रद्धांजलियाँ नियोजित करते रहते थे। धरती पर स्वर्ग के अवतरण का अवसर इसी आधार पर उपलब्ध हुआ था। पर अब तो सब कुछ उलटा हो गया, तथाकथित संत जन, लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण करने के लिए देवताओं के एजेंट बन गए हैं। पैसा खर्चने वाले, आत्म बिडंबना के अतिरिक्त और किसी काम के लिए एक कौड़ी भी खर्चना नहीं चाहते। ऐसी दशा में विकृतियाँ ही बढ़ती हैं। विकृतियाँ मात्र विपत्ति ही नहीं लातीं, वे उनके समाधान के उपायों को भी झुठलाती और उधर ध्यान देने वालों को भी बरगलाती हैं। इस प्रकार समस्या दूनी, दुहरी जटिल हो जाती है।

फिर भी कुछ करना तो है ही। स्वल्प सामर्थ्य में भी हीनता के भाव मन में न लाकर, जो संभव है, उसे कर गुजारना ही इष्ट है। वही किया भी जा रहा है। दुष्कर्मों की तरह सत्कर्मों का अनुकरण करने वाले भी अनेकों निकल आते हैं। दीवाली की रात दीप-मालिकाओं से जगमगाने लगती है। दीप-पर्व मनाया जाता है और समझा जाता है कि समर्थों के मुँह मोड़ लेने पर भी पर सामान्यों और छोटों का समुदाय भी ऐसा कुछ कर गुजरता है, जिसे कम से कम सराहना का लाभ तो मिल ही सके।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

अखंड ज्योति और उसकी सहेली पत्रिकाओं के माध्यम से, पाँच लाख स्थाई और पच्चीस लाख अस्थायी परिजनों का एक समुदाय शांतिकुंज तंत्र के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गया है। यह प्राय: पचास वर्ष से युग समस्याओं, उसके समाधानों और वर्तमान पीढ़ी के युग धर्म स्तर के कर्त्तव्यों के संबंध में निरंतर कुछ पढ़ता, समझता, सोचता तो रहा ही है, साथ ही उसने समय की पुकार को सुनने और तदनुरूप यथा-संभव कदम उठाते रहने का प्रयत्न भी चालू रखा है। यही है अपनी जीवन भर की संचित पूँजी-अपना विचार परिवार, जिसे, वंश परंपरा से कहीं अधिक महत्वपूर्ण और सशक्त माना जा सकता है। इसी को श्रद्धासिक्त पुष्पांजलि के रूप में युग देवता के चरणों में अर्पित करने का निश्चय किया है। दशरथ ने अपने पुत्र विश्वामित्र को सौंप दिए थे। गुरुगोविन्द सिंह के पाँच पुत्रों का भी ऐसा ही श्रेष्ठ सदुपयोग हुआ था। नालंदा विश्वविद्यालय, तक्षशिला विश्वविद्यालय, प्रेम-महाविद्यालय, कलकत्ता का नेशनल कालेज जैसे आश्रम भी अपने छात्रों को ऐसी ही दिशा में अग्रसर करके कृत-कृत्य हुए थे। शांतिकुंज के अंतराल में भी ऐसी ही उत्कट अभिलाषा उभरी है कि वह भी ऐसा ही कुछ अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करे।

वसंत ९० से शांतिकुंज में कई प्रशिक्षण एक साथ चल पड़े हैं। इनमें से प्रथम है-लोक मानस के परिष्कार का आंदोलन और उसका संचालन। दूसरा है-महिला जागरण, जिसमें आधी जनसंख्या को अपना मूल्य समझने, बोध करने के लिए शिक्षित स्वावलंबी और सुसंस्कृत बनने की चेतना को उभारना है। तीसरी है- मानवी अंतराल में सन्निहित प्राण-चेतना के उद्दीपन हेतु साधनात्मक अन्वेषण का निर्धारण परीक्षण, यह शोध-प्रक्रिया ब्रह्मवर्चस् में की जाएगी। महिला प्रशिक्षण को शक्ति चेतना कहा जाएगा और भाव-संवेदना उभारने वाली शिक्षा को कल्प प्रक्रिया नाम दिया गया है। यों तीनों ही उपक्रम एक ही तंत्र के अंतर्गत काम करेंगे और उनका सूत्र-संचालन करने वाली ऊर्जा एक ही बिन्दु से उभरेगी।

कार्यारंभ के प्रथम चरण में सोचा गया है कि पाँच लाख स्थाई पाठक परिजनों में हर साल एक लाख को प्रशिक्षित किया जाए, पाँच लाख को पाँच साल में प्रशिक्षित कर दिया जाए। यदि गति और दुगुनी

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

बढ़ सकी, तो सन् २००० के आगमन में, प्रस्तुत २५ लाख को न केवल प्रशिक्षित कर दिया जाएगा, वरन् किसी न किसी सीमा तक नियमित रूप से हर दिन कुछ न कुछ करते रहने का व्रत धारण करा दिया जाएगा।

एक से पाँच बनने-बनाने का एक आंदोलन इसी के साथ चलाया जा रहा है। इस आधार पर आशा की जा सकती है कि जब इन्हीं दिनों ५ लाख के प्रभाव से २५ लाख कुंसमुसाने और अँगड़ाई लेने लगे हैं तो आगामी वर्षों में २५ लाख से पाँच गुने बढ़ कर सवा करोड़ हो सकते हैं। क्रम आगे भी जारी रहा, तो सवा करोड़ का सवा छै करोड़ हो जाना भी असंभव नहीं। इतने सृजन शिल्पी लोक मानस को परिष्कृत करने में, प्रचलनों में घुसी अवांछनीयताओं को उलटने में बहुत हद तक सफल हो सकते हैं। स्रष्टा की सुनियोजित योजना आगे बढ़ती रही, तो वह दिन दूर नहीं कि जन-जन के मनों में समुद्र-मंथन जैसी प्रक्रिया उभरे और उनमें एक से एक बढ़कर दैवी संपत्ति के प्राणवान रत्न निकलकर इस विश्व वसुधा को स्वर्गोपम बना कर रख दें।

इन दिनों आदर्शवादी विरक्तों को खोज निकालने में सफलता नहीं मिल रही है। रंगीन कपड़े पहनने वालों, माला सटकाने वालों और मुफ्त के सुविधा-साधन बटोरने वालों की कमी नहीं। पर विवेकानंद, दयानंद, केशवानंद कहाँ से आएँ ? उस दिशा में प्राय: निराश हो चलने पर अब सोचा यह गया है कि, सद्गृहस्थों के माध्यम से ही आपत्तिकालीन आवश्यकता को पूरा किया जा सकेगा। इसका और कोई विकल्प भी तो नहीं है।

हर वर्ष एक लाख का शिक्षण-यह शांतिकुंज का वर्तमान निर्धारण है। इसी संख्या में उन महिलाओं को भी सम्मिलित रखा गया है, जो घर की चहारदीवारी से बाहर निकल कर महिला उन्नयन के लिए समय निकाल सकने की स्थिति में हैं। आशा की जानी चाहिए कि सुविधा-साधन बढ़ाते रहें, तो अगले वर्षों में २५ लाख को अपने घर वालों में ही प्रशिक्षित कर दिया जाए। उन्हें ऐसा साँचा बना दिया

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

जाए, जो अपनी बनावट के अनुरूप नए पुर्जे, नए खिलौने ढालने की आवश्यकता पूरी करते रहें। ईश्वर की इच्छा विस्तार करने की हो, तो अपना मिशन भी मत्स्यावतार की तरह सुविस्तृत हो सकता है, समूचे संसार को अपने अंचल में बटोर सकता है।

उपरोक्त प्रशिक्षण वसंत पर्व (३१ जनवरी) सन् ९० से विधिवत् आरंभ हो गया है। इसमें मात्र अखंड ज्योति के परिजन ही पाँच-पाँच दिन के लिए प्रवेश पा सकेंगे। सभी को समय का पूर्व निर्धारण करना होगा और स्वीकृति मिलने पर ही आने की तैयारी करनी होगी। अब उन सभी को कड़ाई के साथ आने के लिए मना कर दिया गया है, जो मात्र सैर-सपाटे के लिए आया करते थे। अशिक्षित, वयोवृद्ध, रोगी, बालक, अनपढ़ इन सत्रों में प्रवेश नहीं ही पा सकेंगे।

पंच दिवसीय साधना का स्थूल और सूक्ष्म स्वरूप

मानवी चेतना तीन शरीर धारण किए हुए है, जिनमें से एक को स्थूल, दूसरे को सूक्ष्म और तीसरे को कारण कहते हैं। इन्हीं के माध्यम से जानकारियाँ प्राप्त करने से लेकर उपलब्धियाँ अर्जित करने तक के अनेकों क्रिया-कलाप संपन्न होते हैं। तदनुरूप ही वे हलके, भारी और सशक्त होते हैं।

बोलचाल की वाणी को ही लें, वह जीभ से निकलती, कानों के छेदों से टकराती, मस्तिष्क में पहुँचती, जानकारी देती और अपना कार्य पूरा कर लेती है। आमतौर से इसी का उच्चारण होता है। विचार विनिमय, अध्यापन-अध्ययन, कथन-श्रवण में इसी का उपयोग होता रहा है। एक कहता-दूसरा सुनता है। जो जानने योग्य है, उसे जानता है। जो पहले से ही जाना हुआ है, उसकी उपेक्षा कर देता। उपदेश प्रयोजन में भी इतनी ही प्रक्रिया संपन्न होती है। वक्ता कहते रहते हैं, श्रोता सुनते रहते हैं। जो नया कुछ होता है, उसे जान लेते हैं, शेष को निरर्थक समझ कर विस्मृत कर देते हैं। धार्मिक प्रयोजन में भी यही होता रहता है। उसमें कथन-श्रवण का ही उपक्रम चलता रहा है : स्तर

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

पर जानकारियों का आदान-प्रदान होता है। ऐसा कुछ नहीं बन पड़ता, जो प्रभाव डाले और अंतराल की गहराई में प्रवेश करके प्रभाव छोड़े, चिरस्थायी बने और मानस में कोई कहने लायक परिवर्तन लाए।

शांतिकुंज के पाँच दिवसीय सत्रों में इससे कुछ अधिक, कुछ गंभीर, कुछ प्राणवान अनुभव होता है। इसलिए उस कथन का वजन भी होता है और प्रभाव भी। निर्धारित कथन किसी ऋषि कल्प मनीषी का ही होता है। उसे संदेशवाहक की तरह कहलवाया किसी दूसरे से भी जा सकता है। उसके पीछे मात्र शब्द-शृंखला नहीं होती, वरन् ऊर्जा रहती है, जो कथनी-करनी और प्राण-चेतना से विनिर्मित होती है। यही कारण है कि वह सुनने वालों के अंतराल की गहराई तक उतरती है, झकझोरती है और ऐसा दबाव डालती है, जिसके आधार पर तथ्यों को हृदयंगम करने और उन्हें जीवन में उतारने के लिए विवश होना पड़े। यही कारण है कि पंच दिवसीय सत्रों में प्रस्तुत किए गए प्रतिपादन अपनी समर्थता, प्रभावशीलता और प्राण-प्रतिभा संपन्न होने का परिचय देते हुए उस मर्म-स्थल तक जा पहुँचते हैं, जहाँ से जीवन क्रम में आदर्शवादी उमंगे उद्भूत होती हैं। इनमें जिह्वा से निकलने वाली बैखरी वाणी ही काम नहीं करती, वरन् उनके साथ सूक्ष्म परिकर की मध्यमा और कारण क्षेत्र की परा वाणी का प्रभाव भी सम्मिलित होता है। वे इंजेक्शन की तरह रक्त प्रवाह में भी सम्मिलित हो जाते हैं।

साधना से सिद्धि का सिद्धांत सर्वविदित और सर्वमान्य है। सिद्धपुरुषों-महामानवों में जो असाधारण शक्ति देखी गई है, उसका एक ही मूलभूत कारण है-उनकी तपश्चर्या। आदर्शों के परिपालन में जो संयम बरतना पड़ता है, उससे बड़प्पन में घाटा पड़ता है। वह कटौती ही संयम साधना है। इसके साथ ही दूसरा पक्ष एक और भी जुड़ा हुआ है कि सत्प्रवृत्ति संवर्धन के लिए श्रेष्ठता को अपनाने, उभारने और उछालने में जो प्रयत्न-परिश्रम करना पड़ता है, यहाँ तक कि घाटा उठाने का भी अवसर आता है, उसे प्रसन्न एवं उल्लसित मन से सहन कर लेना। जो इन दोनों प्रयोजनों को उत्साहपूर्वक अंगीकार कर लेता

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

है, उसे तपस्वी कहते हैं। शरीर और मन को कष्ट सहने के लिए अभ्यस्त बना लेना तितीक्षा है। तितीक्षा के अभ्यास से तपश्चर्या सरल बन जाती है और उसके विकसित होने पर सिद्धियों की फसल भंडार भरने लगती है।

तप का स्वरूप क्या है ? ताप-ऊर्जा द्वारा धातुएँ भट्ठी में पिघला कर अभीष्ट औजारों के रूप में ढाली जाती हैं। मिट्टी के बर्तन आँवे में पककर लाल और कड़े बन जाती हैं। पानी को गरमाने से भाप बनती है और उससे शक्तिशाली इंजन चलने लगते हैं। संसार के अधिकांश महत्वपूर्ण कार्यों में ऊर्जा के नियोजन की अनिवार्य आवश्यकता पड़ती है। पंच दिवसीय साधना में भी व्यक्ति की सहन-शक्ति के अनुरूप विविध साधनाओं का समावेश रखा गया है। पूजा-उपासना के हर प्रसंग में किसी न किसी रूप में तपश्चर्या का अनुपात जुड़ा हुआ है। इसके बिना मात्र उथले कर्मकांडों से किसी को न सिद्धि मिल सकी है, न मिल सकेगी।

आत्मिक प्रगति में एक और भी बड़ी अड़चन है। पूर्व-संचित दुष्कर्मों का समुच्चय। उस विपन्नता को बिना प्रायश्चित के और किसी प्रकार हटाया नहीं जा सकता। मैले कपड़े को धोया न जाए, तो उस पर रंग कैसे चढ़े ? बिना तपे धातु का शुद्ध स्वरूप कैसे निखरे और उससे उपयोगी औजार कैसे बने ? क्रियमाण दुष्कर्म एक ही माँग करता है कि जितनी गहरी खाई खोदी गई है, उसमें उतनी ही मिट्टी डालकर स्थिति समतल जैसी बनाई जाए। यही प्रायश्चित्त प्रक्रिया है। इसके लिए पंच दिवसीय साधना में जहाँ प्रतीकात्मक प्रायश्चित्तों की चिन्ह-पूजा का विधान रहता है, वहाँ यह भी कहा जाता है कि-पापों की खाई पाट सकने योग्य पुण्य कर्मों का नए सिरे से कुछ ऐसा आयोजन किया जाए, जिससे उत्पन्न की गई दुष्प्रवृत्तियाँ अभिनव सत्प्रवृत्तियों से दब-ढँक सकें।

यहाँ एक प्रसंग अनुदान का भी है बीज मात्र अपने बलबूते ही वृक्ष नहीं बन जाता, उसे खाद, पानी, रखवाली जैसी बाहरी सहायताएँ भी अपेक्षित रहती हैं। शांतिकुंज के वातावरण में ऐसे तत्वों का

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

समुचित समावेश हुआ है, जिसके सान्निध्य में चंदन के समीप उगे हुए पौधों की तरह अतिरिक्त लाभ भी मिल सके। स्वाति-वर्षा जब कभी, जहाँ कहीं भी होती है, तब वहाँ समुचित क्षमता वाली सीपों में मोती, केलों में कपूर, बाँसों में वंशलोचन जैसी बहुमूल्य उपलब्धियाँ उपलब्ध होकर रहती हैं। शांतिकुंज में ऐसे तत्व अदृश्य रूप से बरसते रहते हैं, जिन्हें यथा समय ओस-बिन्दुओं की तरह घनीभूत देखा जा सके।

पारस, अमृत और कल्पवृक्ष की चर्चा इस रूप में होती रहती है कि उनका संपर्क-सान्निध्य निहाल कर देता है। सेनेटोरियम उन स्थानों पर बनते हैं, जहाँ की जलवायु औषधि उपचार से भी अधिक लाभदायक हो, रुग्णता और दुर्बलता को भगाने में अमृतोपम सिद्ध हो। शांतिकुंज क्षेत्र को ऐसी सुसंस्कारी भूमि के रूप में देखा जा सकता है, जहाँ गंगातट, हिमालय की छाया और सप्त-ऋषियों की तपश्चर्या के विशिष्ट संस्कार अभी भी अपने पुरातन प्रभाव का परिचय देते हैं।

साधकों को जो आहार दिया जाता है, वह उच्चस्तरीय सात्विकता से परिपूर्ण और प्राण चेतना की आध्यात्मिकता से अनुप्राणित रहता है। उसे बाजारू फलाहार से कहीं अधिक उच्चस्तरीय समझा जाता है।

शांतिकुंज के सूत्र-संचालन में जिस ऋषि-युग्म की प्रधान भूमिका है, वे शरीर न रहने पर भी इस पुण्य भूमि में अपना अस्तित्व बनाए रहने के लिए वचनबद्ध हैं। अगली स्थिति में उनकी साधना और भी अधिक उग्र हो जाएगी। उस समूचे उपार्जन का लाभ उन परिजनों को अनवरत रूप से मिलता रहेगा, जो अगले दिनों नवसृजन के हेतु अपना समयदान, अंशदान नियोजित करने में कृपणता न बरतेंगे।

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.

मिशन की पत्रिकाएँ

(१) अखण्ड ज्योति (मासिक)

(धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का विज्ञान एवं तर्क-तथ्य-प्रमाण की कसौटी पर खरा चिंतन)

वार्षिक शुल्क-९६.००, आजीवन शुल्क-१८००.०० रुपया।

अखण्ड ज्योति अंग्रेजी (द्वि-मासिक)

वार्षिक शुल्क-६०.०० रुपया।

पता : अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा-२८१००३

फोन : (०५६५) २४०३९४०

(२) युग निर्माण योजना (मासिक)

(व्यक्ति, परिवार, समाज निर्माण एवं सात आंदोलनों की मार्गदर्शक पत्रिका)

वार्षिक शुल्क-४८.००, आजीवन शुल्क-९००.०० रुपया।

युग शक्ति गायत्री (गुजराती मासिक)

(गायत्री महाविज्ञान, धर्म, अध्यात्म एवं युगानुकूल विचार परिवर्तन का मार्गदर्शन)

वार्षिक शुल्क-७५.००, आजीवन शुल्क-१५००.०० रुपया।

पता : युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

(३) प्रज्ञा अभियान (पाक्षिक)

(युग निर्माण मिशन के क्रियाकलापों एवं मार्गदर्शन का समाचार-पत्र)

वार्षिक शुल्क-२४.०० रुपया।

पाक्षिक वीडियो पत्रिका : युग प्रवाह

(युग निर्माण मिशन के प्रमुख क्रियाकलापों की दृश्य-श्रव्य जानकारी)

वार्षिक शुल्क-१५००.०० रुपया।

पता : शांतिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : ०१३३४-२६०६०२

Disclaimer / Warning: All literary and artistic material on this website is copyright protected and constitutes an exclusive intellectual property of the owner of the website. Any attempt to infringe upon the owners copyrights or any other form of intellectual property rights over the work would be legally dealt with. Though any of the information (text, image, animation, audio and video) present on the website can be used for propagation with prior written consent.